दैनिक जागरण
शिक्षा में किया निवेश जीवनपर्यंत लाभ देता है

सफाई कर्मियों की अनदेखी

यह अच्छा हुआ कि सुप्रीम कोर्ट ने सफाई कर्मियों की मौतों पर चिंता जताते हुए यह टिप्पणी की कि दुनिया में कहीं भी लोगों को बिना सुरक्षा उपकरणों के सीवर की सफाई के लिए नहीं भेजा जाता। चूंकि भारत में ऐसा किया जाता है इसलिए गैस चैंबर सरीखे सीवरों में उतर कर उनकी सफाई करने वाले कर्मियों की मौत की खबरें रह-रहकर आती ही रहती हैं। सुप्रीम कोर्ट की मानें तो हर माह चार-पांच सफाई कर्मियों की मौत हो जा रही है। ये मौतें गरीब सफाई कर्मियों की अनदेखी का परिणाम हैं। सभ्य समाज को शर्मसार करने और घोर संवेदनहीनता को प्रकट करने वाली ये मौतें इसीलिए होती हैं, क्योंकि सीवरों की साफ-सफाई के लिए जिम्मेदार लोग सफाई कर्मियों की सुरक्षा की तनिक भी परवाह नहीं करते। ऐसा नहीं है कि ऐसे लोग इससे परिचित न हों कि सीवर साफ करने वाले कर्मियों को किन सुरक्षा उपकरणों से लैस होना चाहिए, लेकिन वे आवश्यक सावधानी बरतने से इन्कार करते हैं। इस प्रवृत्ति से स्थानीय निकायों के साथ-साथ राज्य सरकारें भी अच्छी तरह अवगत हैं, लेकिन कोई नहीं जानता कि वे संवेदनशीलता का परिचय देने में आनाकानी क्यों कर रही हैं? जब भी कभी सीवर साफ करने उतरे सफाई कर्मियों की मौत की खबर आती है तब जांच और कार्रवाई के आदेश तो दे दिए जाते हैं, लेकिन आम तौर पर वे निष्प्रभावी ही साबित होते हैं। इसका प्रमाण यह है कि ऐसे मामलों में किसी को भी सजा नहीं दी जा सकी है। कई बार तो यह भी देखने में आता है कि मृतक सफाई कर्मियों के परिजनों को समय पर मुआवजा भी नहीं मिल पाता।

हमारे नीति-नियंताओं को यह बुनियादी समझ होनी ही चाहिए कि जोखिम के बावजूद सफाई कर्मियों को सीवरों में उतारना एक तरह से जानबूझकर उनकी जान से खेलना है। इससे संतुष्ट नहीं हुआ जा सकता कि सफाई कर्मियों की मौतों पर क्षोभ जताते करते हुए सुप्रीम कोर्ट ने स्थितियों में सुधार लाने को कहा, क्योंकि उसकी ओर से केंद्र सरकार को कोई स्पष्ट आदेश-निर्देश नहीं दिए गए। इसका एक कारण यह हो सकता है कि सुप्रीम कोर्ट सफाई कर्मियों की मौतों पर नहीं, बल्कि एससी/एसटी एक्ट के प्रावधानों में बदलाव को लेकर सुनवाई कर रहा था। यह आवश्यक है कि शीर्ष अदालत इसकी चिंता करे कि उसने सफाई कर्मियों के हित में जो भी कदम उठाने की जरूरत जताई है उसकी पूर्ति हो। इसी के साथ केंद्र सरकार से भी यह अपेक्षा की जाती है कि वह राज्य सरकारों को सफाई कर्मियों की मौतों के मामले में आगाह करे और आवश्यक हो तो वांछित नियम-कानून बनाने की दिशा में आगे बढ़े।

हिंदी पर सियासत

हमारे देश की राष्ट्रभाषा हिंदी को लेकर एक बार फिर बुद्धिजीवियों से लेकर राजनीतिक दलों ने सियासत शुरू कर दी है। हिंदी दिवस पर जब केंद्रीय गृहमंत्री अमित शाह ने हिंदी को लेकर जो बातें कहीं उसे लेकर इतना हो हल्ला करने की शायद आवश्यकता नहीं है, क्योंकि हिंदी हमारे देश की राष्ट्रभाषा है। सियासी दलों ने खासकर दक्षिण के तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश के कुछ नेताओं ने इस पर कड़ी प्रतिक्रिया दी थी यह तो समझ में आया। बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ने भी कहा कि सभी भाषाओं का सम्मान होना चाहिए, मातृ भाषा की कीमत पर नहीं। यह बात भी समझ में आई, परंतु बंगाल के विभिन्न क्षेत्रों से जुड़े बुद्धिजीवी जिनकी सियासी पृष्ठभूमि भी है, ऐसे करीब 50 से अधिक लोगों ने राज्य की जनता से सभी भाषाओं को उचित सम्मान देने का आह्वान किया है और केवल एक भाषा थोपने की कोशिश नहीं करने की सलाह दी है। कवि सुबोध सरकार, कवि-स्तंभकार विनायक बंद्योपाध्याय, शिक्षाविद् उर्मिमाला बासु और जगन्नाथ बसु तथा स्वतंत्र फिल्मकार प्रदीप्त भट्टाचार्य समेत कई लोगों ने फेसबुक पर बयान जारी किया और लोगों से उनके जीवन से बांग्ला भाषा को हटाने की किसी भी कोशिश का पुरजोर विरोध करने की अपील की। दो दिन पहले ही केंद्रीय गृह मंत्री अमित शाह ने देश में एक आम भाषा की वकालत की थी और कहा था कि हिंदी सबसे अधिक बोली जाने वाली भाषा है तथा देश को एक सूत्र में बांध सकती है। इसी को लेकर बांग्लाभाषी लोगों ने बयान में आशंका जताई है, 'निकट भविष्य में एक दिन आएगा जब हमारी भाषा, हमारी मातृभाषा, हमारी सबसे प्रिय बांग्ला भाषा खतरे में पड़ जाएगी।' उन्होंने कहा कि कुछ तबकों की ओर से एक भाषा थोपने की धमकी वाली चालों का विरोध होना चाहिए। सरकार ने अलग से एक बयान में कहा, 'मैं हिंदी भाषा का सम्मान करता हूं। लेकिन मैं उतना ही सम्मान मलयाली, मराठी, कोंकणी और देश में बोली जाने वाली अन्य सभी भाषाओं का करता हूं।' परंतु यहां सबसे बड़ा सवाल यह है कि क्या शाह ने ऐसा कहा कि अन्य कोई भाषा नहीं सिर्फ हिंदी ही चलेगी? ऐसा तो नहीं है। तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, केरल, कर्नाटक, मणिपुर, बंगाल, असम समेत कई सूबों में क्षेत्रीय भाषाएं हैं और राज्य सरकार के दफ्तरों में इन्हीं भाषाओं में कार्य होते हैं। हिंदी में नहीं। ऐसे में इसे मुद्दा बनाना उचित नहीं है। हमारा देश बहुलता वाला है। यहां हर भाषा व बोली और धर्म, जाति को समान रूप से सम्मान मिलता है।

ढाई साल में पटरी पर आया उत्तर प्रदेश

योगी आदित्यनाथ

तीस माह बाद यह कहा जा सकता है कि पूरे देश को उत्तर प्रदेश सरकार से जो अपेक्षाएं थीं उन पर वह खरी उतरी है

उत्तर प्रदेश में 19 मार्च, 2017 को जब भाजपा सरकार का गठन हुआ तो व्यवस्था पटरी से उतरी हुई थी। 2003 से लेकर 2017 तक के 14 वर्षों में प्रदेश विकास की मुख्यधारा से पूरी तरह कट चुका था। जनता बार-बार व्यवस्था बदल रही थी, लेकिन प्रत्येक व्यवस्था उसके लिए छलावा साबित हो रही थी। 2014 के बाद देश की बागडोर जब नरेंद्र मोदी ने संभाली तो जनता का ध्यान भाजपा की ओर गया। फलतः उसने 2017 में भाजपा को यूपी में भी समर्थन दिया। जितनी प्रबल जनाकांक्षाएं उतनी ही प्रबल चुनौतियां, लेकिन हमने आगे बढ़कर उन्हें स्वीकार किया और अब ढाई वर्ष बाद यह कहा जा सकता है कि पूरे देश को उत्तर प्रदेश सरकार से जो अपेक्षाएं थीं उन पर वह खरी उतरी है। प्रमाण हैं लोकसभा की 80 सीटों में से 64 पर हमारी जीत। प्रदेश के दोनों प्रमुख क्षेत्रीय दलों ने गठबंधन कर चुनाव लड़ा। उन्हें गलतफहमी थी कि जातिवादी जुमलों से वे जनता को बहकाने में सफल होंगे, लेकिन उनके सपने चूर हो गए।

भाजपा सरकार के पहले राज्य में गुंडों का बोलबाला था। कमजोर की संपत्ति पर कब्जा और बालिकाओं-महिलाओं के साथ छेड़खानी आम बात थी। पुलिस तंत्र निष्क्रिय हो चुका था। हमने जीरो टॉलरेंस की नीति अपनाई और एंटी रोमियो स्क्वॉड बनाए। महिला सशक्तीकरण के लिए वीमेन पावर लाइन-1090 को मजबूत किया, निर्भया फंड का भरपूर उपयोग किया गया। एंटी भूमाफिया टास्क फोर्स ने सरकारी भूमि को कब्जा मुक्त कराते हुए दबंगों को सलाखों के पीछे पहुंचाया। मैंने अधिकारियों को खुली छूट दी जबकि पहले अधिकारी सत्ता के अराजक तत्वों के इशारों पर काम करने को बाध्य थे। 2017 की तुलना में 2018 में अपराधों में कमी आई। डकैती में 53.7, दुष्कर्म में 35.06, हत्या में 14.05, लूट में 44.5, अपहरण में 30.43 और बलवे में 38.1 प्रतिशत की कमी आई है। मैंने भ्रष्टाचार पर भी करारा प्रहार किया और भ्रष्ट कर्मचारियों को जेल भेजा। प्रदेश में एक जनवरी 2018 से अब तक 75,191 आरक्षियों की भर्ती पारदर्शी तरीके से की गई। पहले पुलिसकर्मियों के प्रशिक्षण पर ध्यान नहीं दिया जाता था। हमने पहली बार वर्चुअल क्लास लगाकर उच्च कोटि का प्रशिक्षण दिया। प्रयागराज कुंभ-2019 के सकुशल आयोजन ने विश्व स्तर पर प्रदेश सरकार एवं पुलिस की साख को स्थापित किया।

कानून एवं व्यवस्था का सीधा संबंध औद्योगिक निवेश से होता है। खराब कानून व्यवस्था के चलते राज्य में उद्योग अंतिम सांसे गिन रहा था, पर जब हमारी सरकार बनी तो निवेशकों का ध्यान यूपी पर गया। जब हमने इन्वेस्टर्स समिट की तो बड़े औद्योगिक घरानों ने 4.68 लाख करोड़ रु. के निवेश प्रस्तावों की झड़ी लगा दी। इसके बाद प्रधानमंत्री ने जुलाई 2018 में प्रथम ग्राउंड ब्रेकिंग सेरेमनी में 62 हजार करोड़ रु. से अधिक की 81 परियोजनाओं का शिलान्यास किया। दूसरी ग्राउंड ब्रेकिंग सेरेमनी में 65 हजार करोड़ रु. से अधिक की 250 परियोजनाओं का शिलान्यास गृहमंत्री अमित शाह ने किया। एक जनपद-एक उत्पाद के तहत विभिन्न जिलों में 1,91,191 लाभार्थियों को लगभग 18,345 करोड़ रु का कर्ज वितरित किया और 10 लाख लोगों को रोजगार उपलब्ध कराया। हमारी योजना 25 लाख नौजवानों को पांच वर्ष में आर्थिक स्वावलंबन और रोजगार से जोड़ने की है। हम प्रदेश में व्यापक निवेश के जरिये भी 20 लाख नौजवानों को नौकरी-रोजगार देने जा रहे हैं।

हमारी सरकार ने लघु और सीमांत किसानों के एक लाख रुपये तक के ऋण को माफ किया। दैवीय आपदा प्रभावित किसानों को पहली बार 24 से 48 घंटे के अंदर उनकी क्षति की भरपाई की राशि उनके बैंक खाते में डाल दी गई। इन ढाई वर्षों में रिकॉर्ड गन्ना उत्पादन हुआ और गन्ना किसानों को 73 हजार करोड़ रु. का भुगतान किया गया। चीनी मिलों की क्षमता का विस्तार भी हुआ। सबसे महत्वपूर्ण विषय गेहूं और धान खरीद का था। यह खरीद पिछली सरकारों ने बिचौलियों के हवाले कर दी थी। हमने इसे बिचौलियों से मुक्त कराते हुए चार गुना अधिक गेहूं खरीद कर तीन दिन में सीधे किसान के बैंक खाते में पैसा भेजा। दलहन, तिलहन और मक्का समर्थन मूल्य घोषित कर उनकी सरकारी खरीद कराई गई। पंजीकृत किसानों को 70 से 90 प्रतिशत तक की सब्सिडी के कृषि यंत्र उपलब्ध कराए गए।

पिछली सरकार ने द्वेषवश केंद्रीय योजनाओं को महत्व नहीं दिया था। हमने 2.60 करोड़ से अधिक शौचालय बनाए जिससे प्रदेश ओडीएफ घोषित हो सका। प्रधानमंत्री ने लक्ष्य से एक वर्ष पूर्व ही प्रदेश के ओडीएफ घोषित होने पर राज्य सरकार की प्रशंसा की। ग्रामीण क्षेत्र में व्यापक अभियान चलाकर अल्प समय में 12.82 लाख लोगों को प्रधानमंत्री आवास मुहैया कराए गए। पीएम आवास योजना को नगरीय क्षेत्र में भी विस्तार देते हुए लगभग 13 लाख लोगों को 2.50 लाख रु. प्रति व्यक्ति धनराशि देकर उनके आवास बनवाए गए। आयुष्मान भारत योजना से गरीबी रेखा से नीचे आने वाले 6.47 करोड़ लोगों को पांच लाख रु. प्रतिवर्ष चिकित्सा सुविधा मुहैया कराई गई। विकास के लिए आधारभूत संरचनाओं को विकसित करने के तहत हम पूर्वांचल एक्सप्रेस-वे, बुंदेलखंड एक्सप्रेस वे द्वारा पूरे राज्य को जोड़ रहे हैं। जिला मुख्यालय को फोरलेन, तहसील एवं विकास खंड मुख्यालयों को टू-लेन सड़क से जोड़ने के साथ ग्रामीण सड़कों का सुदृढ़ीकरण हो रहा है। पिछली सरकारों ने शिक्षा में राज्य को दिवालिया बना दिया था। नकल ने शिक्षा का स्तर रसातल में पहुंच दिया। हमने नकल पर अंकुश लगाया।

हमारी सरकार ने विलुप्त हो चलीं नदियों को भी पुर्नजीवित किया। पीलीभीत में गोमती, गोरखपुर में आमी, चित्रकूट की मंदाकिनी, ललितपुर की औडी, आजमगढ़ की तमसा, उन्नाव की सई, बस्ती की मनोरमा, वाराणसी की वरुणा, सहारनपुर की पांवधोई आदि नदियों को या तो पुर्नजीवित किया गया अथवा यह काम तेजी पर है। बुंदेलखंड में खेत तालाब योजना से 12 हजार से अधिक किसानों की भूमि पर तालाब खुदवाए गए। इनमें जहां किसानों को पानी मिल रहा वहीं मत्स्य पालन के द्वारा उनकी आय में वृद्धि हो रही है। नमामि गंगे के तहत गंगा और उसकी 10 सहायक नदियों के किनारे स्थित 33 नगरों के सीवरेज प्लांट हेतु परियोजनाएं स्वीकृत की गई हैं।

जो सांस्कृतिक, सामाजिक और भौगोलिक विविधता संपूर्ण भारत में दिखाई देती है वही उत्तर प्रदेश में भी है। यहां उत्तम सरकार देना चुनौती है, पर पिछले 30 माह में पटरी से उतरे हुए प्रदेश की व्यवस्था अब पुनः पटरी पर है। जनता के बीच यह संदेश गया है कि पारदर्शी व्यवस्था क्या होती है और जाति, मत-मजहब से परे रहकर प्रदेश के विकास की नींव सुदृढ़ता के साथ रखी जा चुकी है। इसी कारण थके-हारे विपक्ष के पास मुद्दों का अभाव है और उसमें खलबली है कि आखिर सरकार का विरोध करने के लिए मुद्दे कहां से लाए।

(लेखक उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री हैं)

response@jagran.com

राजनीति से रिटायर होने से इन्कार

प्रदीप सिंह

राजनीति ही नहीं जहां भी सत्ता है या कुछ रुतबे का अहसास है वहां से कोई हटना नहीं चाहता, उसे हटाना ही पड़ता है

क्या किसी ऐसे व्यक्ति को पद से हटाना, जिसका बड़ा योगदान रहा हो कृतघ्नता है? भारतीय मानस में तो अक्सर ऐसा ही माना जाता है। शायद यही कारण है कि समाज के किसी क्षेत्र और खासतौर से राजनीति में सक्रिय नेता कभी रिटायर ही नहीं होना चाहते। उन्हें धक्का देकर ही हटाना पड़ता है। नेताओं के इसी चरित्र पर आचार्य रजनीश ने कहा था कि 'जो मर गए हैं, उन्हें अगर मौका मिल जाए तो वापस लौट आएं।' राजनीति ही नहीं जहां भी सत्ता है या कुछ रुतबे का अहसास है, वहां से कोई हटना नहीं चाहता। उसे हटाना ही पड़ता है। इसका ताजा संदर्भ है चार पूर्व राज्यपालों कल्याण सिंह, राम नाईक, केसरीनाथ त्रिपाठी और विद्यासागर राव का संवैधानिक पद से हटते ही फिर से भाजपा की सदस्यता लेना। ये सब अपने जीवन के उत्तरार्ध में हैं और पार्टी या सरकार में इन्हें फिर कोई पद मिलने की संभावना नहीं है। इनके सक्रिय राजनीतिक जीवन में पार्टी ने सभी को संगठन और सरकार में हरसंभव पद दिया। फिर भी ये असंतुष्ट हैं। लालकृष्ण आडवाणी और डॉ. मुरली मनोहर जोशी के रूप में ऐसे महानुभाव पहले से मौजूद हैं। कोई सम्मान से रिटायर ही नहीं होना चाहता। बात लंबी न हो जाए, इसलिए दो प्रमुख दलों भाजपा और कांग्रेस की ही बात करते हैं।

आज की भाजपा को बनाने में लालकृष्ण आडवाणी का योगदान कई मायने में अटल बिहारी वाजपेयी से भी ज्यादा है। इस बात से शायद ही कोई इन्कार करेगा, पर एक दशक से ज्यादा समय बिस्तर पर निष्क्रिय पड़े वाजपेयी सक्रिय आडवाणी पर भारी पड़े। उसका एक ही कारण है। भाजपा में राजनीति की बारीकियों की शायद सबसे अच्छी समझ रखने वाले और सांगठनिक कौशल में निर्विवाद रूप से सबसे कुशल आडवाणी सार्वजनिक जीवन के आखिरी दौर में 'नहीं' कहने का साहस नहीं जुटा पाए। आडवाणी के राजनीतिक सफर के बारे में कभी लिखा जाए तो उसके दो भाग होने चाहिए। एक, जनसंघ की स्थापना से वर्ष 2004 तक और दूसरा उसके बाद का। उनकी पाकिस्तान यात्रा और उस प्रसंग पर बहुत कुछ लिखा जा चुका है। ताजा प्रसंग वर्ष 2014 का है। पार्टी और संघ ने उनसे अनुरोध किया कि वह लोकसभा चुनाव न लड़ें। संघ ने संदेश भिजवाया कि ऐसा करने पर उन्हें भाजपा में वही दर्जा प्राप्त होगा जो गैर-कांग्रेस राजनीति में लोकनायक जयप्रकाश नारायण को मिला। इतना ही नहीं भाजपा से संबंधित मसलों पर उनकी बात अंतिम एवं निर्णायक मानी जाएगी और इसकी घोषणा सरसंघचालक खुद करने वाले थे। आडवाणी ने उस पेशकश को ठुकरा दिया और गुमनामी के अंधेरे में चले गए। जो आडवाणी कभी तय करते थे कि भाजपा का टिकट किसे मिलेगा, वह अपना टिकट नहीं बचा पाए। यह सब जानते हुए भी ये चारों पूर्व महामहिम कुछ सीखने-समझने को तैयार नहीं हैं। ये चारों मिलकर भी आडवाणी के कद के आसपास नहीं पहुंचते, मगर कम ही लोग होते हैं जो दूसरों के अनुभव से सीखते हैं। ब्रिटेन के तत्कालीन प्रधानमंत्री विंस्टन चर्चिल ने अपने देश को द्वितीय विश्व युद्ध में जीत दिलाई, पर उसके बाद हुए आम चुनाव में ब्रिटेन के मतदाता ने उन्हें सत्ता से हटा दिया। इसलिए नहीं कि उनके प्रति कोई कृतज्ञता का भाव नहीं था। इसलिए कि उनका काम पूरा हो गया था। भारत में ऐसी कल्पना भी की जा सकती है क्या? यहां तो चर्चिल के मंदिर बन गए होते।

अब थोड़ी बात कांग्रेस की भी कर ली जाए। कांग्रेस आज जिस हालत में है, उसके बहुत से कारण हैं। मगर एक अहम कारण यह भी है कि पुराने लोग नए लोगों के लिए जगह खाली करने को तैयार नहीं हैं। कांग्रेस अध्यक्ष के रूप में राहुल गांधी की नाकामी का एक बड़ा कारण यह भी है। कांग्रेस के बुजर्ग नेताओं का गैंग उन पर भारी पड़ा। हर कदम पर बाधा खड़ी की। उन्हें अपनी पसंद के लोगों या नीतियों को लागू नहीं करने दिया गया। कोई इसकी गारंटी नहीं दे सकता कि ऐसा होता तो वह कामयाब ही होते, पर तब यह नाकामी उनकी अपनी होती। राहुल गांधी की अध्यक्षता का सबसे सुनहरा दौर था जब तीन राज्यों में भाजपा को पराजित करके कांग्रेस की सरकार बनी, लेकिन जीत के उस आभामंडल पर बूढ़े नेताओं का ग्रहण लग गया। राहुल गांधी चाहकर भी राज्यों की बागडोर युवा नेताओं को नहीं सौंप पाए। उस पूरे दौर में उन्हें एक कमजोर, अनिर्णय का शिकार और दूसरों पर आश्रित नेता के तौर पर पेश किया गया। राहुल गांधी का पराभव तो लोकसभा चुनाव का बिगुल बजने से पहले ही हो गया था। वह पहले अपनों द्वारा पराजित हुए, उसके बाद मोदी और भाजपा के हाथों उनका मानमर्दन हुआ। करीब डेढ़ साल के अध्यक्षीय कार्यकाल में हमेशा यह संदेश दिया जाता रहा कि मामला संगठन का हो या राज्य सरकार का, अंतिम फैसले का अधिकार सोनिया गांधी को है। बीस साल तक लगातार अध्यक्ष रहने और राहुल को अध्यक्ष पद सौंपने के बाद भी सोनिया गांधी हटने को तैयार नहीं थीं। आखिर वही हुआ। सोनिया एक बार फिर अध्यक्ष पद पर विराजमान हैं। कांग्रेस की इस समस्या का जल्द समाधान होने वाला नहीं है। वजह यह है कि कांग्रेस में कोई मोदी या अमित शाह नहीं है जो कृतघ्न हुए बिना इन्हें धक्का देकर हटा सके, क्योंकि धक्का देकर हटाने के लिए जो ताकत चाहिए, राजनीति में वह जनसमर्थन से आती है। कांग्रेस में अभी ऐसा कोई है नहीं। इसलिए कांग्रेस के सामने दो ही विकल्प हैं। एक, ऐसे ही तिल-तिल जलती रहे। या फिर युवा पीढ़ी के नेता अपनी एकजुटता से वह ताकत पैदा करें और परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त करें।

सोनिया गांधी सहित बुजुर्ग नेताओं को बताने की जरूरत है कि आपका बड़ा तप, बलिदान और योगदान रहा है। आप ही के कारण पार्टी 2004 में सत्ता में आई, लेकिन अब आपका काम पूरा हो गया है। अब आपकी विदाई का समय है। विदाई किसी का अपमान नहीं है। यह सिर्फ यही बताने की कोशिश है कि आपने मार्ग दिखाया इसके लिए आभारी हैं। कुछ दूर अंगुली पकड़कर चलाया, अहसानमंद हैं। अब हमने चलना सीख लिया है। हमें चलने दीजिए। नेताओं की इस प्रवृत्ति पर आश्चर्य इसलिए होता है कि यह उस भारत में हो रहा है जिसका पूरा चिंतन ही राजनीति के प्रति वैराग्य सिखाता है।

(लेखक राजनीतिक विश्लेषक एवं वरिष्ठ स्तंभकार हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

क्षमा का महत्व

'क्षमा वीरस्य भूषणम्' यानी क्षमा वीरों का आभूषण है। जो कायर निर्बल पुरुषों के पास नहीं मिल सकती। क्षमा याचना और क्षमादान, यह दोनों वे वृत्तियां हैं जो हृदय को विकार रहित कर देती हैं जो कलुषता को मिटाकर परम शांति की अनुभूति कराती हैं। जो अहंकारी हैं, वही किसी से क्षमा याचना नहीं कर सकते। अपनी गलतियों को स्वीकारना किसी साहसिक कार्य से कम नहीं होता। जब हम गलतियों को स्वीकारते है तो हृदय में पश्चाताप के भाव भरे होते हैं। आधुनिक दौर में अधिकांश लोग अपनी गलतियों के लिए दूसरों को जिम्मेदार ठहराते हैं। परिस्थितियों का भी दोष गिनाया जाता है। ऐसे लोगों का मन संकुचित भावों से भरा होता है। अपनी गलतियों का ठीकरा दूसरों पर फोड़कर हम दुनिया से बच सकते हैं, लेकिन स्वयं से नहीं।

वहीं ऐसे लोग भी है जो अपनी विफलता स्वीकार करते हुए पुनः श्रेष्ठ प्रयास करने की ललक लिए होते है। भूलवश होने वाली गलतियों के लिए क्षमा के भावों से भरे हुए होते है। क्षमा का महत्व इतना है कि जैन धर्म में क्षमावाणी पर्व की तरह है। जिसका तात्पर्य जीवन में किए गए अपराधों के शोधन के लिए अवसर प्रदान करना है। क्षमावाणी पर्व की विशेषता यही है कि न सिर्फ क्षमा मांगी जाती है, बल्कि क्षमा करने का उपक्रम भी किया जाता है। यह पर्व छोटे-बड़े, अपने-पराये, दोस्त-शत्रु के बीच भेद को समाप्त कर देता है। क्षमावाणी सिर्फ मनुष्यों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि इस संसार में जितने भी मूक पशु-पक्षी विचरण कर रहे है उन्हें यदि मनुष्य के किसी कृत्य द्वारा कोई कष्ट पहुंचा हो या उन्होंने वेदना का अनुभव किया हो तो उनके प्रति भी क्षमा के भावों को अभिव्यक्त किया जाता है। हमारी तमाम समस्याओं का अंत तो उस समय ही हो जाए जब हम अपनी गलतियों का दोष किसी और को देने के स्थान पर स्वयं स्वीकार कर लें, किंतु ऐसा नहीं होता और छोटी-छोटी समस्याएं विशाल रूप धारण कर लेती हैं। आज के समय का सबसे कठिन कार्य स्वयं की गलतियों को स्वीकार करते हुए क्षमा मांगना ही है।

सौरभ जैन

साझा कोशिशों से ही बढ़ेगी हिंदी

डॉ. साकेत सहाय

हिंदी केवल सरकारी प्रयासों से ही भारत की व्यापक स्वीकार्य भाषा नहीं बनेगी, इसके लिए सामूहिक प्रयास करने होंगे

अक्सर हम हिंदी को राष्ट्रभाषा के काल्पनिक पचड़े में उलझाना चाहते हैं, मगर यह सत्य है कि हिंदी राष्ट्रभाषा थी। इसीलिए ब्रिटिश भारत से आधुनिक स्वतंत्र भारत बनने के क्रम में संवैधानिक रूप से राजभाषा के पद पर हिंदी आसीन हुई। राष्ट्रभाषा ही राजभाषा के पद पर आसीन होती है। अतः यह कुतर्क न किया जाए कि हिंदी राष्ट्रभाषा नहीं है। किसी भी राष्ट्र की व्यवस्था में राजभाषा और राष्ट्रभाषा में भिन्नता नहीं है। इसीलिए संविधान निर्माताओं ने भी हिंदी को राजभाषा, राष्ट्रभाषा के रूप में अंगीकार किया। दरअसल समस्या कहीं और है। यह मानसिकता से जुड़ा मसला है। संविधान का अनुच्छेद 351 एक सशक्त, समर्थ समावेशी हिंदी की बात करता है, मगर हम हिंदी को इन तीनों से विमुक्त रूप में अपनाना चाहते हैं। राष्ट्रभाषा सिद्ध करने से क्या होगा?

हिंदी केवल एक भाषा-मात्र नहीं है। यह राजनीति, संस्कृति, समाज और लोक की भाषा है। इसीलिए यह लोकभाषा, संस्कृति की भाषा, संपर्क की भाषा, राष्ट्रभाषा से होते हुए राजभाषा के पद पर आसीन हुई और अब संचार की भाषा से तकनीक की भाषा के रूप में परिवर्तित हो गई है। वास्तव में हिंदी आमजन की भाषा है। व्यवस्था की सफलता भी आमजन की सफलता है। भारत का अधिकांश जनमानस उस हिंदी को समझता है जो संस्कृत एवं लोक भाषाओं पर आधारित है, बस उसकी लिपि भिन्न होती है। हां कुछ अग्रेजीदां लोगों की नजर में वह क्लिष्ट हिंदी कहलाती है, क्योंकि उनकी नजर में पिछले 70 वर्षों से स्वतंत्रता के बावजूद क्लिष्ट अंग्रेजी थोपने का उन्हें अधिकार है। क्लिष्ट भाषा नहीं, क्लिष्ट एक बहाना है। अपनी भाषा को विकृत करने का। बंगाल में, ओडिशा में लिखित शिक्षा से अनभिज्ञ आबादी भी अपनी रोजमर्रा की जिंदगी में ऐसे कई हिंदी के शब्दों का उपयोग करते हैं जिसका अर्थ वे नहीं जानते हैं।

समस्या कठिन या सरल की नहीं, बल्कि मानसिकता की है। समस्या आम जन या नेताओं की नहीं, अंग्रेजी पिट्ठू धारी प्रशासनिक अधिकारियों की है जो हिंदी के सबसे बड़े अवरोधक हैं। इससे हिंदी बंध रही है। हिंदी को खुलने की जरूरत है। अपनी ताकत को पहचानने की जरूरत है। हिंदी चाहे सरल हो सहज हो या क्लिष्ट। बस यह भारतीयता के करीब होनी चाहिए। इस देश में वही चलता है जो भारतीयता के करीब होता है। हिंदी भी इसीलिए चल रही है, क्योंकि हिंदी समन्वय की भाषा है। बस चलाने वाले इसे जान बूझकर समझते नहीं। कभी गौतम बुद्ध ने संस्कृत को छोड़कर जनभाषा के नाम पर पाली का प्रयोग किया, कभी जैनियों ने प्राकृत, फिर मुगल, तुर्क ने अरबी-फारसी चलाई, फिर अंग्रेजों ने अंग्रेजी चलाई। लोगों ने सब कुछ व्यवस्था के रूप में स्वीकारा, पर हिंदी दिल से चल रही है।

हमें समझना होगा कि हिंदी केवल सरकारी प्रयासों से भारत की लिखित भाषा नहीं बनेगी, बल्कि सामूहिक प्रयासों से बनेगी। जैसे एकमत से राजभाषा बनी। भाषाएं प्रकृति की जीवंतता के लिए प्राणतत्व हैं और हिंदी समावेशी, सर्वग्राही भारतीय समाज के लिए प्राणतत्व है।

(लेखक हिंदी भाषा के विशेषज्ञ हैं)

कृषि संबंधी उद्योगों पर जोर दे सरकार

'रोजगारपरक उद्योगों की सुध ले सरकार' शीर्षक लेख के तहत जीएन वाजपेयी ने देश में आर्थिक सुस्ती से निपटने के कुछ उपाय सुझाए। लेखक ने बिल्कुल सही आकलन किया कि मोदी सरकार को उन उद्योगों की तरफ ध्यान देना चाहिए जिन पर अन्य कारोबार निर्भर हैं। उद्योग-धंधे देश की आर्थिक व्यवस्था की रीढ़ होते हैं। ऐसे में मोदी सरकार के पहले कार्यकाल में नोटबंदी का फैसला देश के तमाम उद्योग-धंधों की रीढ़ तोड़ने वाला साबित हुआ। आज आर्थिक मंदी से देश में बेरोजगारी भी बढ़ी है, बहुत-सी कंपनियों ने तो मंदी से निपटने के लिए अपने यहां कामगारों की छंटनी भी शुरू कर दी है। यह भी ध्यान देने योग्य है कि भारत में चीनी वस्तुओं और ऑनलाइन बाजार ने भी रोजगार पर प्रहार किया है। हमारा देश कृषि प्रधान देश है, लेकिन कुछ मौसम की मार से, कुछ सरकारों के ढुलमुल रवैये से और युवा पीढ़ी का कृषि में रोजगार के प्रति दिलचस्पी न होने से भी, कृषि रोजगार का जरिया नहीं बन पा रही। रोजगार पर प्रहार बढ़ती जनसंख्या ने भी किया है। अगर जनसंख्या वृद्धि को रोकने के लिए अभी से उपाय नहीं किए गए तो भविष्य में बेरोजगारी विकट समस्या इतनी विकराल रूप धारण कर लेगी। स्वरोजगार को बढ़ावा देकर भी देश में रोजगार के अवसर बढ़ाए जा सकते हैं। अगर सरकारों द्वारा कृषि, मत्स्य पालन और लगभग हर गांव में छोटी-बड़ी दूध की डेयरी खोलने के लिए लोगों को विशेष पैकेज जारी किए जाएं तो इससे सरकारों को भी काफी कमाई हो सकती है। ऐसा होने से दूध और मछली से बने उत्पादों का निर्यात भी किया जा सकता है जिससे किसानों की आमदनी बढ़ाई जा सकती है।

राजेश कुमार चौहान, जालंधर

मेलबाक्स

अब मध्यस्थता का औचित्य?

करोड़ों लोगों की आस्था का केंद्र अयोध्या का श्रीराम जन्मभूमि का मामला वैसे तो उच्चतम न्यायालय में विचाराधीन है, लेकिन इस आस्था से जुड़े मामले पर लंबी खिंचती न्याय प्रक्रिया भी कम चिंतनीय नहीं है। एक तरफ जहां लगातार सुनवाई चल रही है तो दूसरे तरफ कुछ पक्ष की मध्यस्थता की मांग भी चिंतित करने वाली है। जब न्यायालय जल्द फैसला देने के लिए रोजाना सुनवाई कर रहा तब मध्यस्थता का क्या औचित्य? जबकि रोजाना सुनवाई के पहले भी सुप्रीम कोर्ट की पहल पर मध्यस्थता की जा चुकी है और परिणाम जीरो दर्ज हुआ, उसके बावजूद भी मध्यस्थता की पेशकश समझ से परे है। अब जब कोर्ट निरंतर सुनवाई करके जल्द ही इस मामले में फैसला देने की तैयारी में है तो कुछ हस्तियां इस केस को लटकाने के चक्कर में हैं जिससे कि उनकी दुकान चलती रहे।

नीरज कुमार पाठक, नोएडा

मतदाता सूची को लेकर कवायद

बीएलओ द्वारा घर-घर जाकर मोबाइल एप के जरिये मतदाताओं के भौतिक सत्यापन का कार्य किया जा रहा है। मतदाता सूची में त्रुटियों को सुधार के साथ- साथ सत्यापन के लिए राशन कार्ड, आधार कार्ड, पैन कार्ड या कोई ऐसे ही 10 दस्तावेजों में से किसी एक दस्तावेज का फोटो अपलोड कर उसके नंबर डालकर यह कार्य करना है। 800 से लेकर 1100 मतदाताओं के दस्तावेजों के फोटो खींचने, उसको क्राप करने व फिर अपलोड करने में काफी समय लगता है, जो बीएलओ के कार्य में लगे हैं उन्हें अपने अपनी मूल संस्था, कार्यालयों के काम भी करने होते हैं। बेहतर हो कि चुनाव आयोग केवल उक्त दस्तावेज के नंबर डलवाए, जिससे काम में सुविधा होगी।

hemahariupadhyay@gmail.com

मंत्रियों का उचित प्रशिक्षण

योगी सरकार ने अपने मंत्रियों की आइआइएम, लखनऊ में क्लास लगाकर निस्संदेह एक सराहनीय व अनुकरणीय कार्य किया है। मुख्यमंत्री योगी का यह निर्णय मंत्रियों की कार्यप्रणाली में गुणात्मक परिवर्तन लाएगा। मुख्यमंत्री ने नई समझ और नई सोच को देश के सामने प्रस्तुत किया है। अब देखना यह है कि योगी सरकार के मंत्री इस अर्जित ज्ञान से कैसे अपने कार्य में गुणात्मक परिवर्तन लाते हैं। सकारात्मक परिणाम मिलने पर इसे विभिन्न सरकारी विभागों में भी लागू किया जा सकता है और उनके अधिकारियों व कर्मचारियों की क्लास आइआइएम द्वारा ली जा सकती है, ताकि सरकार के कार्य में गुणात्मक सुधार हो।

डा. मनोज कुमार शर्मा, स्याना

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल : mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. संपादकीय निदेशक-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग,रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई शुल्क अतिरिक्त।